इतने भोले भंडारी नहीं 'बारु द' के 'सिंह'

आलोक मेहता

संजय बारु के किताबी प्रमाण-पत्र के बाद नरेन्द्र मोदी ने भी मनमोहन सिंह के व्यक्तित्व और 1991 से चली उनकी आर्थिक नीतियों की तारीफ कर दी। उम्मीद यही की जानी चाहिए कि मोदी जी के सत्ता में आने पर शिष्य संजय और गुरु मनमोहन सिंह को नई सरकार की कृपा से राष्ट्रीय-अंतरराष्ट्रीय स्तर पर कोई सम्मानजनक पद मिल जाए। चंद्रशेखर जी ने तो प्रधानमंत्री पद से इस्तीफे के बाद भी शरण में पहुंचने पर मनमोहन सिंह को विश्वविद्यालय अनुदान आयोग की कुर्सी दयापूर्वक दे दी थी। कुछ महीनों के बाद नरसिंह राव प्रधानमंत्री बने, तो मनमोहन वित्त मंत्री ही बन गए। पिछले 25 वर्ष के दौरान मनमोहन सिंह पर किसी शीर्ष राज नेता की कोप दृष्टि नहीं रही। लोकतांत्रिक दुनिया में संभवतः वह अकेले ऐसे कुशल नेता हैं, जो पंचायत, नगर-पालिका, विधानसभा, लोक सभा में जनता का समर्थन पाकर विजयी हुए बिना 24 वर्षों तक वित्त मंत्री, संसद के उच्च सदन के नेता और प्रधानमंत्री के महत्वपूर्ण पदों पर कब्जा बनाए रखे।

इतनी बड़ी राजनीतिक चतुराई के बावजूद बारु साहब से मोदीजी तक मनमोहन सिंह पर दया दिखाते हुए उन्हें कमजोर, निरीह, सेवक की संज्ञा दे रहे हैं। निश्चित रूप से सोनिया गांधी और कांग्रेस पार्टी के प्रतिनिधि होने के नाते हर बड़े निर्णय के समय उन्हें विभिन्न स्तरों पर संभलकर सलाह-मशविरा करना पड़ा या अपने सहयोगियों को मध्यस्थ की तरह आगे बढ़ाकर सहमति बनवानी पड़ी। लोकतांत्रिक व्यवस्था में यह स्वाभाविक है। लोकप्रिय माने जाने वाले पं. जवाहरलाल नेहरू या अटल बिहारी वाजपेयी को क्या महत्वपूर्ण मुद्दों पर संगठन के नेताओं के दबाव झेलकर निर्णय नहीं करने पड़े हैं? नेहरू या अटलजी से तुलना न करके मनमोहन सिंह की कथित 'बेबसी' की असलियत के कुछ तथ्यों पर ध्यान दिया जाए। मनमोहन सिंह के परम मित्र सलाहकार, भक्त और आलोचक सिक्के के दूसरे पहलुओं पर भी कृपापूर्वक विचार करें। जब परम शिष्य संजय बारु पत्रकारिता की पृष्ठभूमि के आधार पर कई गोपनीय तथ्य पुस्तक रूप में सामने रख सकते हैं तो हम जैसे पत्रकार भी कुछ अपनी आंखों देखी, मनमोहनजी से सुनी बातें और प्रधानमंत्री सचिवालय के रिकॉर्ड की चर्चा कर सकते हैं।

सबसे ताजा तथ्य - 2013 के आरंभिक महीने का है। तारीख डायरी न होने के कारण मैं नहीं लिख सकता, लेकिन प्रधानमंत्री कार्यालय और सुरक्षा व्यवस्था के रिकॉर्ड में मेरे मिलने का रिकॉर्ड उपलब्ध है। यह मुलाकात किसी इंटरव्यू के लिए नहीं थी। अनौपचारिक बातचीत के बाद मैंने भाजपा नेतृत्व सरकार के दौरान सीमा सुरक्षा से जुड़े एक ठेके में गड़बड़ी के कुछ तथ्यों के प्रमाण के लिए प्रधानमंत्रीजी से सहयोग का आग्रह किया। इस मामले में भाजपा के एक शीर्ष नेता का नाम जुड़ा हुआ था। इसे 'भाजपा विरोधी' न कहें, तो पत्रकारिता की प्रोफेशनल मांग के तहत राष्ट्रहित में भी कहा जा सकता है। सीमा सुरक्षा का विषय होने से 'सूचना' के अधिकार के तहत अधिकृत प्रमाण नहीं मिल सकते थे। फिर भी कंपनी के नाम, नेता के रिश्तों के तथ्य आदि का विवरण देने के बावजूद मनमोहन सिंह ने दो टूक शब्दों में उत्तर दिया - 'देखिये, मैं भाजपा के ऐसे किसी बड़े नेता से टकराव मोल लेना नहीं चाहता। न ही ऐसी किसी फाइल को खुलवाने के पक्ष में हूं। वे मुझ पर या गांधी परिवार के विरुद्ध जो हमला करना चाहें, करते रहें।'

सवाल यह है कि चुनावी वर्ष शुरू होने पर भाजपा नेताओं के सांप्रदायिक और भ्रष्ट होने या उनसे देश के लिए खतरे की बात मनमोहन सिंह क्यों करने लगे हैं? घोटाले पर न सही, सांप्रदायिकता के मुद्दे पर क्या वह 'विशेष अदालतों' का प्रावधान कर बाबरी मस्जिद ध्वंस या अन्य आतंकवादी गतिविधियों के आरोपियों के मामलों पर जल्द फैसले की कोशिश नहीं कर सकते थे?

सरकारी रिकॉर्ड में उपलब्ध एक मामला। प्रधानमंत्री मनमोहन सिंह और उनके सर्वाधिक प्रिय सहयोगी मोंटेक सिंह अहलुवालिया के करीबी एक वरिष्ठ अधिकारी पर भ्रष्टाचार के गंभीर आरोप सामने आए। एक मामला कॉमनवेल्थ खेल से जुड़े भ्रष्टाचार से संबंधित भी था। यह अधिकारी वैसे स्वायत्त संस्था के शीर्ष पद पर था, लेकिन जवाबदेही मंत्रालय के लिए भी थी। वह मंत्री से टकराव इस हद तक करता रहा कि प्रधानमंत्री के समक्ष गुहार लगाई गई। अधिकारी के विरुद्ध कार्रवाई की फाइल प्रधानमंत्री कार्यालय जाती रही। निराश-परेशान मंत्री ने इस्तीफा देने की पेशकश तक कर दी। लेकिन प्रधानमंत्री मनमोहन सिंह इस अधिकारी के विरुद्ध कार्रवाई के लिए तैयार नहीं हुए। संवैधानिक कारणों से अधिकारी को हटाने के लिए राष्ट्रपति की स्वीकृति की भी जरूरत थी। भ्रष्ट अधिकारी का बाल बांका नहीं हुआ और निर्धारित कार्य काल लगभग पूरा होने पर ही उसे हटना पड़ा। मजेदार बात यह है कि संबंधित मंत्री को सोनिया गांधी का सबसे करीबी तब भी माना जाता था और आज भी माना जाता है। मंत्रिमंडल के अंतिम फेर-बदल में उन्हें मंत्री पद से भी अलग होना पड़ा। अब बताएं - क्या मनमोहन सिंह 10 जनपथ के कारण कमजोर प्रधानमंत्री रहे हैं?

तीसरा बड़ा तथ्य - संजय बारु या प्रधानमंत्री के वर्तमान सूचना सलाहकार पिछले 10 या 5 वर्ष के दौरान सोनिया गांधी और उनके कार्यालय से हुए पत्र-व्यवहार सूचना के अधिकार के तहत क्यों नहीं जारी कर देते? तब यह उजागर हो जाएगा कि सोनिया गांधी की कितनी अनुशंसाओं को कूड़े के डिब्बे में डाला गया है? सार्वजनिक क्षेत्र के उपक्रमों अथवा अन्य महत्वपूर्ण नियुक्तियों में 10 जनपथ से अधिक सिफारिशें चंडीगढ़ से आने वाले एक बुजुर्ग व्यक्तिगत मित्र और कुछ पुराने पसंदीदा अफसरों की मानी गई या नहीं? भ्रष्ट अधिकारियों पर कार्रवाई में ढिलाई का क्या रहस्य रहा। सीबीआई की रिपोर्ट में कुछ बड़े नेताओं के विरुद्ध प्रमाण होने के बावजूद प्रधानमंत्री कार्यालय में महीनों तक फाइलें क्यों पड़ी रहीं? सोनिया गांधी तो इन नेताओं को कतई पसंद नहीं करती थीं।

सच तो यह है कि संजय बारु की किताब के समानान्तर एक पुस्तक लिखकर मनमोहन सिंह के असली रूप को पेश किया जा सकता है। वह कह चुके हैं कि इतिहास उनके काम की असली समीक्षा करेगा। देर से ही सही, पिछले 10 वर्षों की सफलताओं के साथ राजनीतिक पाखंड के तथ्य जनता के सामने आने चाहिए। ■

alokmehta7@hotmail.com